The Research Dialogue
An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed / Refereed Research Journal
ISSN: 2583-438X
Volume-04, Issue-01, April-2025
www.theresearchdialogue.com

"भारतीय ज्ञान परंपराओं का परिचय: प्राचीन भारतीय ग्रंथों में विज्ञान और सामाजिक विज्ञान की एक झलक"

शशि कुमार शेखर
सहायक-प्राध्यापक
अमलतास कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन, इन्द्रपुरी, रोहतास, बिहार
ईमेल : shashi.kumar@amaltascollege.com

सार:

भारतीय ज्ञान परंपरा एक समृद्ध और विविध परंपरा है जो हजारों वर्षों से चली आ रही है। इस परंपरा का प्राचीन भारतीय ग्रंथों में गहरा प्रभाव है। इन ग्रंथों में विज्ञान और सामाजिक विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित ज्ञान का समावेश है। भारतीय ज्ञान परंपराएं, प्राचीन काल से विकसित ज्ञान की एक समृद्ध और विविध प्रणाली है। यह वेद, उपनिषद, पुराण, शास्त्र, और अन्य प्राचीन ग्रंथों में निहित है। इन ग्रंथों में विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, दर्शन, कला, और धर्म सहित विभिन्न विषयों का ज्ञान शामिल है। विज्ञान के क्षेत्र में, प्राचीन भारतीयों ने खगोल विज्ञान, गणित, चिकित्सा, और धातु विज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया। वेदों में सूर्य, चंद्रमा, और ग्रहों की गति का वर्णन है। उन्होंने शून्य की अवधारणा और दशमलव प्रणाली विकसित की। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में, प्राचीन ऋषियों ने राजनीति, अर्थशास्त्र, और समाजशास्त्र पर महत्वपूर्ण ग्रंथ लिखे। गुरुकुल प्रणाली भारतीय शिक्षा पद्धति का अभिन्न अंग थी, जहाँ विद्यार्थी वेदों, शास्त्रों, विज्ञान, और अन्य विषयों का गहन अध्ययन करते थे। यह प्रणाली केवल शैक्षणिक शिक्षा तक सीमित नहीं थी, बल्कि चरित्र निर्माण और जीवन मूल्यों को भी सिखाती थी। यह सार प्राचीन भारतीय ग्रंथों में विज्ञान और सामाजिक विज्ञान की विविधता और समृद्धि का एक संक्षिप्त विवरण प्रदान करता है।

मुख्य शब्द: *भारतीय ज्ञान परंपरा, गुरुकुल, आधुनिक विज्ञान, **अर्थशास्त्र और** सतत् पोषणीय विकास I*

प्रस्तावना

यह अत्यंत महत्वपूर्ण पहल भारत सरकार द्वारा की गई है। भारत सरकार का शिक्षा विभाग चाहता है कि शिक्षा जगत में, विशेषकर उच्च शिक्षा के क्षेत्र में, आधुनिक शिक्षा के साथ भारतीय ज्ञान परंपरा पर भी अनुसंधान, शिक्षण, अध्यापन और अध्ययन कार्य प्रारंभ हो। इस दृष्टि से योजना करके भारत सरकार ने विभिन्न स्थानों पर कई केन्द्रों की स्थापना करने का प्रयास किया है, और शिक्षकों को प्रशिक्षित करने का कार्य किया है। यह अत्यंत स्वागत योग्य विषय है। किंतु शैक्षिक जगत में, विशेषकर आम जनमानस के बीच भी, एक दृष्टि विकसित होना आवश्यक है।

अगर हम भारतीय ज्ञान परंपरा शब्दों को देखें, तो यह अलग-अलग शब्द भी हैं, और इसको जोड़ करके एक पदावली के रूप में भी हम देख सकते हैं। भारतीय क्या है? क्या यह भौगोलिक है या फिर कुछ और है? जब हम भारत की बात कर रहे हैं, तो नेशन स्टेट की बात कर रहे हैं कि सिविलाइजेशन

स्टेट की बात कर रहे हैं? कालिदास ने एक भौगोलिक मानचित्र दिया है भारत का, वह कहते हैं: अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः। पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः।।

दिनकर कहते हैं, "भू के मानचित्र पर अंकित त्रिभुज यही क्या तू है?"

ये इस भारत की बात कर रहे हैं या फिर कुछ और बात कर रहे हैं? जब हम कहते हैं कि भारत के कुछ मूल्य हैं जो शाश्वत हैं, क्या वह वाकई शाश्वत हैं? जब हम कहते हैं, "भारतीय ज्ञान परंपरा", वह भारतीय ज्ञान परंपरा क्या है? क्या वह गतिशील है या स्थिर है?

जब हम इन प्रश्नों को टटोलने की कोशिश करते हैं, तो हम पाते हैं कि भारतीय ज्ञान तो वह है जो समावेशी है। जो सबके लिए जगह पैदा करता है। यह नहीं कि "मैं नहीं हूँ" या "मैं ही हूँ"। बल्कि हम यहाँ से शुरू करते हैं कि "मैं भी हूँ"। जब हम यहाँ से शुरू करते हैं कि "मैं भी हूँ", तब हम दूसरों के लिए जगह बनाते हैं।

इसलिए आपने देखा होगा कि भारत के अंदर जो कुछ भी है, वह सिर्फ भौगोलिक सीमा के भीतर की ही बात नहीं है। इसमें रीति-रिवाज, ज्ञान, संस्कार, परंपरा, मूल्य, बहुत कुछ ऐसी है जो इस भौगोलिक सीमा के भीतर की नहीं है, लेकिन वह भारतीय हो गई है। क्योंकि हमने सबके लिए जगह पैदा की है। और तभी हम कहते हैं:

सह नाववतु।
सह नौ भुनक्तु।
सहवीर्यं करवावहै।
तेजस्वि नावधीतमस्तु।
मा विद्विषावहै॥

तो हम साथ चलने की बात करते हैं। हम साथ में एक-दूसरे का पोषण करेंगे। हम पूरे प्रयास के साथ कार्य करेंगे। हम में द्वेष का भाव नहीं होगा। तो यह समावेशी परंपरा की बात है। और यह भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल्य रहा है।

आप देखें, एक ही समय में बौद्ध दर्शन, जैन दर्शन, इस्लामी दर्शन, हिंदू दर्शन सब सह-अस्तित्व में हैं। महात्मा बुद्ध ने अपना ज्ञान सारनाथ में दिया। जैन धर्म से जुड़े चार तीर्थंकर यही वाराणसी के आसपास पैदा हुए। वाराणसी में ही जैन दर्शन स्यादवाद है, 'स्यादवाद महाविद्यालय' एक स्कूल चलता है। और यही नहीं, जो बिल्कुल हमसे विपरीत मत रखने वाले लोग थे, जो संप्रदाय थे, जो आजीवक थे, जो भौतिकवादी थे, जिनका कोई विश्वास ईश्वरवादी अवधारणाओं के साथ मेल नहीं खाता, हमने उनके लिए भी जगह पैदा की है। यह ऐसा समाज है। और तभी गोस्वामी जी कहते हैं,

'बंदउँ संत असज्जन चरना'।

हमने संतों की ही नहीं, हमने असज्जनों की भी वंदना की है। प्राचीन काल में एक प्रसंग आता है कि जब आचार्य शास्त्र ज्ञान दे देते हैं अपने शिष्यों को, तो कहते हैं, देखो जो मेरे पास जानकारी थी मैंने तुम्हारे समक्ष रखा, अब मैं जीवन कौशल के बारे में बात करूंगा। और हम लोग पढ़ते हैं,

'यान्यनाव्द्यानी कर्मणि तानी सेवित्वायानी नो इतरानी'।

यह श्लोक भगवद गीता में मिलता है और यह जीवन के उद्देश्य और कर्मयोग के सिद्धांतों को बयान करता है। इसमें बताया गया है कि हमें उन कर्मों को करना चाहिए जो हमें स्वर्ग या मुक्ति की दिशा में आगे बढ़ाते हैं और हमें नहीं करना चाहिए जो हमें अधोलोक में गिराते हैं। **यानी जो आनंददायक कार्य सिर्फ वही करें।** लेकिन अनिंदनीय कार्य क्या है, उसकी हमने सूची नहीं दी। क्योंकि हर समय वह समाज तय करेगा कि अनिंदनीय कार्य क्या है। **इसलिए मेरे लिहाज से भारतीय ज्ञान परंपरा गतिशील है, बल्कि यह अत्यधिक गतिशील है। एक और बात हमें समझने की जरूरत है कि भारतीय ज्ञान परंपरा को समृद्ध करने का कार्य सिर्फ आचार्यों ने नहीं किया है। इसमें समाज के अन्य वर्गों की भी अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है। मैं आपके समक्ष दो-तीन उदाहरण रखूँगा।**

एक प्रसंग आता है जब आचार्य आदि शंकराचार्य जी अपने शिष्यों के साथ काशी, वाराणसी आते हैं। वहां गंगा स्नान करके जब वापस जा रहे होते हैं तो सामने से एक 'चांडाल' व्यक्ति आ रहा होता है। वह व्यक्ति जैसे ही करीब आता है, आदि शंकराचार्य जोर से कहते हैं, "दूर हटो।" वह व्यक्ति प्रतिउत्तर में कहता है, "किसको दूर हटाने की बात कर रहे हैं? आप तो अद्वैत वेदांती हैं। दो शरीरों को अलग करने की बात कर रहे हैं? या आपके शरीर में जो आत्मा है, मेरे शरीर में जो आत्मा है, उसमें कुछ भेद है?"

आदि शंकराचार्य को इस संवाद से समझ में आ जाता है कि यह व्यक्ति साधारण नहीं हो सकता। उसके ज्ञान के समक्ष आदि शंकराचार्य नतमस्तक होते हैं। यह संवाद आदि शंकराचार्य और चांडाल के बीच आदि शंकराचार्य जी ने ही नियोजित किया है। उनकी रचना है मनीषा पंचकर्म। मैं कह रहा हूँ कि भारत एक ऐसा समाज है जहाँ आदि शंकराचार्य जैसे प्रबुद्ध व्यक्ति भी उस चंडाल के समक्ष नतमस्तक होते हैं।

दूसरा उदाहरण, एक दिन, राजा भोज अपने राज्य की स्थिति देखने के लिए अपने राजमहल से बाहर निकले। वे अक्सर अपने राज्य की स्थिति और प्रजा की स्थिति देखने के लिए बाहर निकलते थे। एक दिन, वे अपने राजमहल से निकले और सामने से एक लकड़हारा बहुत बड़ा गठर सिर पर लेकर आ रहा था। राजा भोज ने लकड़हारे से पूछा, "किन्ते 'बाधति' भारम्?" अर्थात्, "क्या तुम्हें यह भार कष्ट दे रहा है?"

लकड़हारा ने उत्तर दिया, "भारन्न बाधते राजन्, यथा 'बाधति' बाधते।" अर्थात्, "हे राजन्! मुझे यह भार उतना कष्ट नहीं दे रहा है, जितना आपका यह अशुद्ध भाषा प्रयोग।"

संस्कृत भाषा में, "बाध्" धातु का प्रयोग आत्मनेपद में होता है, जिसके रूप "बाधते, बाधेते, बाधन्ते" के समान चलते हैं। लेकिन राजा भोज ने जो प्रश्न किया था, उसमें उन्होंने "बाध्" धातु को परस्मैपदी रूप (बाधति, बाधतः, बधन्ति) में अशुद्ध रूप से प्रयोग किया था। लकड़हारा एक साधारण व्यक्ति था, लेकिन वह संस्कृत भाषा का अच्छा ज्ञाता था। उसने राजा भोज के अशुद्ध भाषा प्रयोग पर उन्हें टोका।

इसी अशुद्ध भाषा प्रयोग के कारण वह सामान्य लकडहारा, राजा से कहता है कि, ,हे श्रीमान्! मुझे यह लकड़ी का भार उतना कष्ट नहीं दे रहा है जितना आपके द्वारा किया गया भाषा का अशुद्ध प्रयोग (बाधते को बाधति कहना) कष्ट दे रहा है।'

यह भारतीय समाज और संस्कृति की बौद्धिक गहराई रही है। एक और शब्द है जिसका प्रयोग हम सहजता से नहीं करते। यह जो भारतीय संगीत परंपरा है, इसको समृद्ध करने का कार्य उन स्त्रियों को जाता है। अगर उन्हें हम "संगीतजीवी स्त्रियां" कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। यह जो हम "बनारसी, टप्पा, दादर, कजरी" कहते हैं, यह तमाम चीजें हैं जो विश्व में समृद्ध करने का कार्य, उसका संवहन और संरक्षण करने का कार्य उन संगीतजीवी स्त्रियों को ही जाता है। तो मेरे लिहाज से जो भारतीय ज्ञान परंपरा है, वह समावेशी है। और तभी रामानंद कहते हैं, "जाति-पाति पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि को होई।"

पूरे भक्ति आंदोलन में, आप देख सकते हैं कि बंगाल से लेकर गुजरात तक, कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक, कोई भी व्हाट्सएप ग्रुप से जुड़ा नहीं था। जैसे आजकल के लोग जुड़ जाते हैं। लेकिन संवेदना के स्तर पर, लोग एक ही थे। तो यह जो मानवता की सामान्य मानो भूमि है, उसको कैसे बरकरार रखा जाए? यह सब लोगों की चिंता है। तभी कबीर कहते हैं कि

मेरा तेरा मनुओं कैसे इक होई रे।

मैं कहता हूँ आँखों देखी, तू कहता कागज की लेखी।

मैं कहता हूँ सुलझावनहारी, तू रख्यौ उलझाई रे।

मैं कहता हूँ तू जागृत रहियो, तू रहता है सोई रे।

मैं कहता हूँ निर्मोही रहियो, तू जाता है मोही रे।

मेरा तेरा मनुओं कैसे इक होई रे।

हम भारतीयों के समक्ष जो सबसे बड़ी चुनौती है कि हम अपनी ज्ञान परंपरा, भारतीय ज्ञान परंपरा को कैसे संरक्षित कर पाएँ और कैसे आम जनमानस तक उसे ला पाएँ? और यह जो आख्यान तैयार किया गया है कि जो कुछ भी हुआ है, पिछले 100, डेढ़ सौ, 200 वर्षों में हुआ है और ज्ञान का उद्भव पश्चात दुनिया में हुआ है और वहाँ से पूरे विश्व में यह प्रचारित-प्रसारित हो रहा है, यह गलत आख्यान तैयार किया गया है। अगर हम अपनी भारतीय ज्ञान परंपरा को देखें तो, अथर्ववेद का श्लोक है:

'माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः' I

जब 1972 में स्टॉकहोम सम्मेलन हुआ, तब विश्व के पर्यावरणविदों को लगा कि विश्व में तबाही सी मच गई है। प्रदूषण का स्तर बहुत बढ़ गया है। आज के पहले पर्यावरण बिल्कुल शुद्ध था। अब जाकर कुछ गड़बड़ी नजर आई है। 1987 में जब ब्रंटलैंड रिपोर्ट आई, तो उसमें सतत् पोषणीय विकास की ऐसी परिभाषा दी गई है जो अपने आप में विरोधाभासी है। उसमें 'आवश्यकता' की बात कही जाती है। लेकिन हम जो कहते हैं, "माता भूमिः पुत्रो अहम् पृथिव्या", तो हम पृथ्वी को माँ मानते हैं और माँ हमारा पोषण करती है। जो हमारा पोषण करती है, उसका हम शोषण कैसे कर सकते हैं? हमें यहाँ से सीखने की जरूरत है।

कबीर कहते हैं,

दास कबीर जतन से ओढ़ी, ज्यों की त्यों धरि दीनी चदरिया ॥

यह संसाधनों के उच्चतम प्रयोग का मॉडल है।

1922 में अमेरिका की संस्था, अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ जियोग्राफर्स, ने एक वक्तव्य दिया कि भूगोल मानव पारिस्थितिकी के रूप में है। उसके पहले भूगोल को कहा जाता था कि यह भूतल का अध्ययन है जिसमें मानवीय संवेदनाओं और मानवीय पक्ष को शामिल नहीं किया जाता था। लेकिन जब 1956 में, स्वतंत्र भारत में पहला अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में हुआ, वहां लोगों ने कहा कि हमारे ऋषि महर्षि पहले भूगोलशास्त्री थे। उन्होंने प्रकृति के साथ अपने जीवन को समायोजित करके अपने जीवन को आकार दिया है। हमारी ज्ञान परंपरा बहुत ही पुरानी है। हमें दुनिया के सामने लाने की आवश्यकता है। आज हम वैश्वीकरण के दौर में 'ग्लोबल विलेज' की बात कर रहे हैं। हम तो सदा से कहते हैं:

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्। उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।

हमारा वसुधैव कुटुंबकम दुनिया को जोड़ने का कार्य करता है। लेकिन आज जो ग्लोबल विलेज की परिभाषा है, उसकी जो अवधारणा है, वह भौतिकवादी और भोगवादी है। आज हमारे संबंधी विदेशों में हैं। हम उनसे इंटरनेट के माध्यम से जुड़ जाते हैं और उनसे वार्तालाप करते हैं। और हम कहते हैं, हमारा वसुधैव कुटुंबकम हो गया। हमें इस पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में नगर नियोजन और नगर विन्यास की पहली चर्चा देखने को मिलती है। कराधान की शुरुआत भी कौटिल्य की अर्थशास्त्र में मिलती है। भारत ज्ञान भूमि है। और यह तपोभूमि भी बनेगा। अगर भारत की शिक्षा व्यवस्था और भारतीय ज्ञान परंपरा का पुनरुत्थान होगा, पुनर्जागरण होगा। लगभग 1400 आक्रमण इस देश पर हुए। फिर भी यह देश टस से मस नहीं हुआ। कुछ तो शक्ति है इस देश की। लोग कहते हैं कि यह सोना खरीदने वाला देश है। प्रतिवर्ष हम 46-48 टन सोना खरीदते हैं। तो क्या सोना हमारी शक्ति है? लोग कहते हैं, यह कृषि प्रधान देश है। ऋषि और कृषि की परंपरा हमारे देश में रही है। तो क्या कृषि हमारी शक्ति है? प्राचीन काल से जो अब तक जो हमारी शक्ति रही है, वह सज्जन शक्ति रही है। सद इति सत्य, जन इति जनाः। सत्य के आधार पर जिन्होंने अपना जीवन व्यतीत किया।

जैसे आचार्य शंकर, महावीर, आचार्य सुश्रुत, आचार्य कणाद, अनेक ऋषि और महर्षि हुए, जिन्होंने भारतीय ज्ञान परंपरा को समृद्ध करने का कार्य किया और हमें एक दिशा देने की कोशिश की है। लेकिन जब 18वीं शताब्दी में मैकाले शिक्षा तंत्र आता है, तो उस

तंत्र में हम इस प्रकार उलझ जाते हैं कि हमें कभी अवसर ही नहीं मिलता कि हमारे तैत्रेय उपनिषद में क्या लिखा हुआ है, हम जाकर वहां से कुछ ज्ञान निकाले।

आधुनिक भौतिकी में, आधुनिक भौतिकी की एक शाखा, सैद्धांतिक भौतिकी, सृष्टि की उत्पत्ति के बारे में विभिन्न प्रकार के सिद्धांतों का निर्माण करती है। उनमें से एक सिद्धांत यह है कि जगत कैसे बनता है? हम सोचते हैं और जगत बनता है। यह साक्षात स्वरूप लेता है। यथा दृष्टि तथा सृष्टि। आधुनिक भौतिकी में कई ऐसे सिद्धांत आये हैं। परमाणुओं और छोटे-छोटे कणों के अंदर जाकर जब आधुनिक वैज्ञानिकों ने क्वार्क आदि कणों को देखना शुरू किया और उसके लिए सूक्ष्मदर्शी यंत्र प्रारंभ किया। वे कणों की गति को देखने की कोशिश कर रहे थे। कुल मिलाकर अंदर क्या हलचल हो रही है? कण की स्थिति को देखने की कोशिश कर रहे थे। उन्होंने तो कणाद को पढ़ा था नहीं। वैशेषिक सूत्र पता नहीं थे। इसलिए वे कण की गति को आधुनिक सिद्धांतों के आधार पर देखने का प्रयास कर रहे थे।

20वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में ही हेजेनबर्ग नामक वैज्ञानिक ने बता दिया था कि कण की गति को ठीक से नहीं समझा जा सकता। वही, बाह्य जगत में न्यूटन के गति के नियम के अनुसार हम बता सकते हैं कि अगर किसी भी वस्तु की गति बता दी जाए और दिशा हमको पता हो तो उसकी स्थिति बता सकते हैं और यह भी बता सकते हैं कि वह कितने समय में वहां पहुँचेगा। यह न्यूटन के गति के नियम के अनुसार हम बता सकते हैं। लेकिन जब कणों के ऊपर इस नियम को लागू करने का प्रयास किया गया तो वह सूक्ष्म कण इस नियम के ऊपर खड़े नहीं होते। हेजेनबर्ग को लगा कि ये या तो गति बता सकता है या स्थिति बता सकता है। गति बताए तो स्थिति नहीं बता सकता या स्थिति बताए तो गति नहीं बता सकता।

फ्रिट्ज ऑफ कापरा नाम का एक भौतिक विज्ञानी जो भारत के आध्यात्म से प्रभावित होकर अनेक पुस्तकें लिखते हैं। उन्होंने पुस्तक "द टाओ ऑफ फिजिक्स" लिखी। "द टाओ ऑफ फिजिक्स" वेदों में विज्ञान का एक अच्छा उदाहरण है। वह भौतिकी के सिद्धांतों को आध्यात्मिक ग्रंथों में खोजने का कार्य करते हैं। उन्होंने हाइजेनबर्ग के साक्षात्कार के ऊपर एक पुस्तक निकाली। उस पुस्तक में हाइजेनबर्ग कहता है कि जब उसे ज्ञात हुआ कि कण की गति और स्थिति दोनों एक साथ नहीं बता सकते, तो वह बहुत अचंभित हुआ। लेकिन उस समय के वैज्ञानिक अपने सिद्धांत को लेकर इतने स्थिर थे कि वह साहस जुटा नहीं पाया शोध पत्र लिखने का। 1929 में जब वह रवीन्द्रनाथ ठाकुर के निमंत्रण पर भारत आता है, तो उनके साथ उपनिषदों और वेदों का अध्ययन करने का अवसर मिलता है। वेदों में कई ऐसी बातें उसे पढ़ने को मिलती हैं, जो बाहर से बिल्कुल विपरीत लगने वाली बातें कैसे अकाद्यता को दर्शाती हैं। वह वहां उसे देखने को मिलता है। और फिर वहां से वह प्रभावित होकर "अननिश्चितता सिद्धांत" के रूप में सिद्धांत को देता है।

इस सिद्धांत ने आधुनिक भौतिकी को एक नई दिशा दी। और फिर सृष्टि की उत्पत्ति के बारे में विभिन्न प्रकार के सिद्धांत समय-समय पर सामने आए। स्टीफन हॉकिंग का एक सिद्धांत आता है। वह समय को समझने की कोशिश करते हैं। उनकी पुस्तक आती है 1980 के दशक में "ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ टाइम" इस नाम से। वह आधुनिक वैज्ञानिक आधुनिक भौतिकी को किस दृष्टि से देखता है, उसको बताने का प्रयत्न करते हैं। और तारकाओं के अध्ययन के द्वारा जो सिद्धांत सामने आ रहे थे, समय की नई-नई गतियाँ, समय की परावर्तन की गतियाँ। उदाहरण के तौर पर, उन्हें पता चला कि चंद्रमा पर गुरुत्वाकर्षण कम होता है। तो वहाँ समय धीरे चलता है। तो वहाँ दिन छोटा होगा। ऋग्वेद में खास तौर पर हमारे काल की गति के बारे में चर्चा है। इंद्र का दिन, ब्रह्मा का दिन। तो फिर भौतिकी को ऐसे समझ में आने लगा।

स्टीफन हॉकिंस ने कहा कि समय वृत्ताकार नहीं, पूर्ण गोलाकार है। ऐसी बात "ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ टाइम" में लिखी हुई है। हम तो सदा से कहते आये हैं ''कालचक्र'' । आज फिजिक्स वेदों को नहीं मानते। इसमें वेदों का कोई नुकसान नहीं है। आज फिजिक्स वेदों के सिद्धांत को प्रमाणित करने लगी है,

इससे यह स्पष्ट होता है कि फिजिक्स सही दिशा में है। इससे वेद प्रमाणित नहीं होते। इससे फिजिक्स प्रमाणित होती है। वेद तो प्रमाण हैं। आज जो ऐसी स्थिति बनी है कि आधुनिक विज्ञान के अधूरे ज्ञान, अधूरे प्रयोग हैं, जो पूर्णता को प्राप्त नहीं हुए हैं, यह आधुनिक वैज्ञानिक भी मानते हैं।

वह ऊर्जा को देख रहे हैं I ऊर्जा का प्रयोग कर रहे हैं I ऊर्जा को समझ रहे हैं I लेकिन उस ऊर्जा के पीछे जो एक तत्व है I जो यूनिफाइड फील्ड है, उसको वह नहीं समझ रहे हैं I आज के विद्यार्थी भी जानते हैं I आधुनिक फिजिक्स में कितने गृहतक हैं I

फिजिक्स का कोई भी सिद्धांत लें, पहला वाक्य आपको मिलेगा कि अन्य सभी बातें आदर्श होने पर ही वह सिद्धांत लागू होता है। न्यूटन का पहला नियम, गति का नियम कहता है कि अन्य सभी बल स्थिर होने पर, कोई भी वस्तु गति अथवा स्थिरता की स्थिति में है, तो वह उसी स्थिति में बनी रहेगी। इसे जड़ता का नियम कहते हैं। मतलब, कोई भी वस्तु अगर गति की स्थिति में है तो गतिमान रहेगी। स्थिरता की स्थिति में है तो स्थिर रहेगी। जब तक उस पर कोई अन्य बल लागू नहीं होता। यह तब संभव है जब ब्रह्मांड में सारी बातें आदर्श हों। लेकिन ब्रह्मांड में सारी बातें आदर्श नहीं होतीं। तब गति क्या करेगी? इसके बारे में आधुनिक वैज्ञानिक कुछ नहीं कहते।

ऐसे अधूरे ज्ञान जो पूर्णता को प्राप्त नहीं हुए हैं। आधुनिक वैज्ञानिक कहते हैं कि अभी ब्रह्मांड को वह थाह नहीं पाए हैं। कहाँ तक ब्रह्मांड फैला हुआ है? एक सिद्धांत है कि ब्रह्मांड अभी भी फैल रहा है। जब फैलने बंद करेगा, तो सिकुड़ना शुरू कर देगा। आधुनिक वैज्ञानिक तारापुंजों को, निहारिकाओं को, अंदर ही अंदर सूक्ष्मदर्शी और दूरदर्शी के माध्यम से जाकर अध्ययन करते हैं। और बाहर से भी जाकर अध्ययन करते हैं। उसके आधार पर जो उन्हें समझ में आता है, एक सिद्धांत बना देते हैं। वह सिद्धांत कुछ वर्षों में गलत साबित हो जाता है। जब तक हेइज़ेनबर्ग नहीं आए थे, तब तक न्यूटन का क्लासिकल मैकेनिक्स अंतिम नियम था। वैसे ही, रसायन विज्ञान में, मेन्डेलीफ के 105 तत्वों के वर्गीकरण के सिद्धांत को अंतिम माना जाता था। उसने कहा था कि इसके बाहर कुछ और नहीं होंगे। लेकिन फिर कुछ और जुड़ गए। ऐसे सिद्धांत जो 15-20 वर्षों में ही अपनी सत्ता खो देते हैं, उनके आधार पर हम कालजयी वेदों को प्रमाणित नहीं कर सकते। यह कहीं भी तर्कसंगत नहीं है।

आयुर्वेद हमारे जीवन को, हमारे शरीर से परे जो प्राण तत्व है, उससे परे जो मन है, उन सबसे मिलकर जो व्यक्तित्व बनता है, और व्यक्तित्व के अंतःसंबंध की वजह से जो सामूहिक व्यक्तित्व बनता है I वेदांत उसको समष्टि कहता है। उस व्यष्टि और समष्टि को पूरी तरह से समझ करके, आधी और व्याधि, दोनों के निराकरण का उपाय वाग्भट बताते हैं।

इतनी सूक्ष्मता से जाकर हमने आहार को समझा हुआ है। वात, पित्त और कफ त्रिदोषों को हमने सत्, रज और तम के आधार पर समझा हुआ है। इस सूक्ष्मदर्शी विज्ञान को हम आधुनिक विज्ञान के स्थूलदर्शी शास्त्र से प्रमाणित नहीं कर सकते हैं। वैशेषिक के सूत्रों को जिस तरह से कणाद ने समझा हुआ है, जगत को जिस तरह से वाग्भट्ट ने देखा हुआ है, समझा हुआ है, चरक आदि सुश्रुत आदि ने जिस तरह से आयुर्वेद के विज्ञान को समझा हुआ है, आधुनिक वैज्ञानिक नहीं समझ पाए हैं। आज पर्यावरण बदलना पड़ेगा, समाज पोषित, ज्ञान केंद्रित पर्यावरण भारत में उत्पन्न करना पड़ेगा।

यदि ब्रिटिश सर्वेक्षण बताती है कि 1823 में अंग्रेजों के आने के पूर्व भारत शत प्रतिशत साक्षर था तो वह साक्षरता का आधार क्या था ? वह आधार यही भारतीय ज्ञान परंपरा थी,और गुरुकुल शिक्षा पद्धति थी I यदि 7 लाख गाँवों में शिक्षा की ऐसी व्यवस्था थी कि प्रत्येक जाति, वर्ण, धर्म के लोगों को सामान्य शिक्षा उपलब्ध करवाई जा रही थी, तो वह आधार ज्ञान, अन्वेषण, गवेशन, शोध की वजह से था। वह शोध की पुनरप्रतिष्ठा भारत के हर विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, विद्यालय में हो। शोध शिक्षण विधि का अंग बने। यदि भारत खुद को विश्व के समक्ष प्रकट कर रहा था, एक सशक्त समाज

के रूप में, राजसत्ता के रूप में, अध्यात्म के रूप में, उद्यम के रूप में, उत्पादकता के रूप में, तो वह समाज पोषित ज्ञान केंद्रित पर्यावरण भारत के हर विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, विद्यालय में प्रतिष्ठित हो।

आज पूरे देश में गुरुकुल के बारे में चर्चाएं हो रही हैं। यह अत्यंत महत्वपूर्ण और दुर्गामी विषय है। गुरुकुल को युगानुकूल रूप से आज प्रतिष्ठित करना है। यह एक चुनौती है। रामकथा का एक प्रसंग है, जब राम वनवास जाते हैं, तो वे अनेक ऋषियों के आश्रम में जाते हैं। सर्वांग ऋषि के आश्रम में जाते हैं, महर्षि अत्री के आश्रम में जाते हैं, मुनि अगस्ती के आश्रम में जाते हैं। सभी जगह जाते हैं। उनका चर्चा होता है। उनका वार्तालाप होता है।

जब मैं शिक्षक के रूप में इस विषय को देखता हूं, तो पता चलता है कि चारों, पांचों आश्रमों में वह जा रहे हैं। वहां उनका चर्चा हो रहा है, वार्तालाप हो रहा है। उस चर्चा का विषय क्या है? क्या सभी के सभी आश्रम एक जैसे हैं, जिस तरह से आजकल की मैकॉले शिक्षा पद्धति में कर दिया गया है I दक्षिण से उत्तर, पश्चिम से पूर्व, कहीं भी चले जाएं, एक जैसे विद्यार्थी, एक जैसे विद्यालय, एक जैसे पाठ्यक्रम, एक जैसे बच्चे रट रहे हैं, बन रहे हैं, निकल रहे हैं। जिससे कोई संतुष्ट नहीं है। लेकिन C शिक्षा पद्धति की विशेषता यह थी कि जिस प्रकार प्रत्येक मनुष्य अपने आप में अद्वितीय है, अपने भीतर के देवत्व को अपनी-अपनी पद्धति से प्रकट कर रहा है।

उसी प्रकार प्रत्येक गुरुकुल अपनी पद्धति और पाठ्यक्रम को तैयार करता था। यह हमें रामकथा में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। यह आदर्श शिक्षा पद्धति है, राम बनाने वाली शिक्षा पद्धति है। किस प्रकार गुरुकुल शिक्षा पद्धति व्यवहारिकता से मनुष्य के जीवन के संघर्ष के लिए तैयार करती है, यह रामकथा में स्पष्ट रूप से दिखता है। एक सुंदर प्रसंग है, जब विश्वामित्र दशरथ के दरवाजे पर जाते हैं और कहते हैं कि उन्हें राम चाहिए। यज्ञ की रक्षा के लिए, उन्हें राम चाहिए। किस प्रकार दशरथ विचलित होते हैं। वे कहते हैं, मेरे पुत्रों को लेकर जाओ। मैं स्वयं चलने को तैयार हूं। लेकिन मेरे राम को कहां लेकर जा रहे हो? लेकिन राम अपने कर्तव्य करने के लिए तत्पर थे।

दशरथ के दरवाजे पर, विश्वामित्र के जाने के पीछे का उद्देश्य क्या था? यहां हमें गुरुकुल शिक्षा पद्धति की विशेषता ध्यान में आती है। अपने गृह में रहकर, लाड़-प्यार में रहकर, बच्चों को विद्यालय भेजकर, अगर हम ऐसी अपेक्षा करते हैं कि बच्चे के अंदर का राम जगा देंगे, तो यह संभव नहीं है। शिक्षा का, विद्या प्राप्ति का, पहला नियम है, गृह त्याग करना पड़ेगा। विद्यार्थी के पांच लक्षणों में गृह त्याग महत्वपूर्ण है। इसलिए राम को सुरक्षित वातावरण से बाहर निकलने का काम विश्वामित्र करते हैं। शिक्षा गुरु के कुल में रहकर, गुरु के गृह में रहकर करनी पड़ेगी। तभी जाकर राम जगना शुरू होंगे। संस्कार उत्पन्न होंगे।

जब राम जा रहे हैं, तो लक्ष्मण तो साथ जाएंगे ही। दोनों राजा के पुत्र हैं। रथ लेकर जा सकते थे। वस्त्र आदि की व्यवस्थाएं करके उनको भेजा जा सकता था। लेकिन वे खुद जितना सामान उठा सके उतना ही सामान लेकर गए। यहां दूसरी विशेषता गुरुकुल शिक्षा पद्धति की ध्यान में आती है- ''स्वावलंबन'' एक संस्कार है। अपने खुद के कार्य करने का प्रशिक्षण। अगर मैं खाता हूं तो मुझे बनाने आना चाहिए।

तीसरा प्रसंग, रामकथा का, जब राम और लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ जंगल में जा रहे हैं, तो अचानक से चारों ओर के लक्षण बदल जाते हैं। अंधेरा हो जाता है। प्राणियों में भय व्याप्त हो जाता है। पक्षियाँ जोर-जोर से चह-चाहने लगती हैं। राम और लक्ष्मण विश्वामित्र से पूछते हैं, "यह क्या है?" विश्वामित्र बताते हैं, "यह राक्षस होने के लक्षण हैं। जिस आतंक का निर्माण राक्षसों के होने के कारण होता है, उस राक्षस संस्कृति के लक्षणों का ज्ञान विश्वामित्र राम को करते हैं। क्या जीवन में त्याज्य है? क्या जीवन में अपनाना नहीं है? उस संस्कृति का व्यावहारिक ज्ञान विश्वामित्र राम को करते हैं।"

यह गुरुकुल शिक्षा पद्धति की तीसरी विशेषता है जो हमें अपने पेडागोजी में लागू करने की जरूरत है। चौथी विशेषता यह है कि जब राम और लक्ष्मण वन में जा रहे हैं, विश्वामित्र के साथ, तो यज्ञ की रक्षा करने के लिए जा रहे हैं। यज्ञ क्या है? यज्ञ अनुसंधान है। यज्ञ शोध है। यज्ञ नवाचार है। सृष्टि की रक्षा का प्रण है। यज्ञ प्राणियों की रक्षा का प्रण है। चौथा मंत्र यह है कि गुरुकुल शिक्षा पद्धति की हमें ध्यान में लाने की जरूरत है।

और पांचवा और सबसे महत्वपूर्ण मंत्र यह है कि गुरुकुल शिक्षा का उद्देश्य राम कथा में राम का उद्देश्य सीता प्राप्त कर लेना था। जानकी प्राप्त कर लेना राम का लक्ष्य नहीं था, बल्कि राम का उद्देश्य रामराज्य की स्थापना करना था।

कस्त्वं कोहम कुतः आयातः का मे जननी कोऽमे तातः। आप कौन हैं, मैं कहाँ से हैं, मेरी जननी कौन हैं, मेरे पिताजी कौन हैं?

गुरुकुल शिक्षा हमें हमारे जीवन का लक्ष्य देकर घर वापस भेजती है। यह पांच बातें गुरुकुल शिक्षा में बहुत महत्वपूर्ण हैं:

- गृह त्याग से, स्वावलंबन की ओर: गुरुकुल में शिक्षार्थी को गृह त्याग कर स्वावलंबी बनने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।
- क्या जीवन में अपनाना है? यज्ञ संस्कृति का परिचय: गुरुकुल में शिक्षार्थी को यह सिखाया जाता है कि उसे जीवन में क्या अपनाना चाहिए और क्या त्यागना चाहिए। यज्ञ संस्कृति का परिचय दिया जाता है।
- क्या जीवन में त्याग करना है? राक्षस संस्कृति का परिचय: गुरुकुल में शिक्षार्थी को यह भी सिखाया जाता है कि उसे जीवन में क्या त्याग करना चाहिए। राक्षस संस्कृति का परिचय दिया जाता है।
- और गुरुकुल छोड़ने के पूर्व जीवन का उद्देश्य लेकर के जाना है I

इन सारी विशेषताओं पर हमें विचार करने की जरूरत है। आधुनिक शिक्षा पद्धति में इन विशेषताओं को लागू करने की जरूरत है।

निष्कर्ष:

भारतीय ज्ञान परंपरा एक समृद्ध और व्यापक परंपरा है, जो विभिन्न शास्त्रों और विज्ञानों में अपना गहरा प्रभाव छोड़ चुकी है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में नीतिगत और आर्थिक प्रबंधन की अद्वितीय दृष्टि प्रस्तुत की गई है, जो आज भी प्रासंगिक है। आयुर्वेद, जो विश्व की प्राचीनतम चिकित्सा प्रणालियों में से एक है, शरीर, मन और आत्मा के संतुलन पर बल देता है और आधुनिक चिकित्सा विज्ञान को भी प्रेरित करता है। वहीं, आधुनिक भौतिकी के कई सिद्धांत भारतीय दार्शनिक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से जुड़े हुए हैं। प्राचीन भारतीय मनीषियों ने परमाणु, ऊर्जा, पदार्थ, और ब्रह्मांड की संरचना पर विचार प्रस्तुत किए, जो बाद में आधुनिक विज्ञान के विकास में सहायक सिद्ध हुए। भारतीय ज्ञान परंपरा केवल अतीत की उपलब्धियों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सतत् विकास, नवाचार और आधुनिक युग की आवश्यकताओं के अनुरूप ज्ञान को समाहित करने की क्षमता रखती है। अतः, यह स्पष्ट होता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा केवल ऐतिहासिक धरोहर नहीं, बल्कि एक जीवंत प्रणाली है, जो अर्थशास्त्र, चिकित्सा, भौतिकी और समग्र जीवन दृष्टि को एकीकृत कर आधुनिक समाज को सशक्त बनाने में सक्षम है।

भारतीय ज्ञान परंपरा का मतलब यह कतई नहीं है कि प्राचीनतम शिक्षा व्यवस्था को हूबहू लागू कर देना। प्राचीनतम शिक्षा व्यवस्था को युगानुकूल, देशानुकूल, पुनर्भाषित करके पुनर्प्रतिष्ठित करने का नाम भारतीय ज्ञान परंपरा है।

संदर्भ

- हॉकिंग, एस. डब्ल्यू. (2003)। *A Brief History of Time* (*समय का संक्षिप्त इतिहास*)। बैंटम बुक्स।
- कौटिल्य। (2014)। *Arthashastra* (*अर्थशास्त्र*)। पेंगुइन क्लासिक्स।
- वाल्मीकि। (2017)। *रामायण*। दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन।

THE RESEARCH DIALOGUE

An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed /Refereed National Research Journal
ISSN: 2583-438X
Volume-04, Issue-01, April-2025
www.theresearchdialogue.com
Certificate Number April-2025/05
Impact Factor (RPRI-4.73)

Certificate Of Publication

This Certificate is proudly presented to

शशि कुमार शेखर

for publication of research paper title

"भारतीय ज्ञान परंपराओं का परिचय: प्राचीन भारतीय ग्रंथों में विज्ञान और सामाजिक विज्ञान की एक झलक"

Published in 'The Research Dialogue' Peer-Reviewed / Refereed Research Journal and
E-ISSN: 2583-438X, Volume-04, Issue-01, Month April, Year-2025.

Dr. Neeraj Yadav
Executive Chief Editor

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Editor-in-chief

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at www.theresearchdialogue.com

INDEXED BY